अध्याय-1
पहला अध्याय : विषय उपस्थापन

1.1 विषय कथन

1.2 सम्बद्ध साहित्य का सर्वेक्षण

1.3 विषय परिसीमन

1.4 विषय का महत्व

1.5 विषय की मौलिकता

अध्याय-1

विषय उपस्थापन

1.1 विषय कथन

इस सृष्टि में मानव जीवन को सभी प्राणियों में सर्वोच्च माना गया है। उसके पास जो हृदय और बुद्धितत्व के सामंजस्य का साम्राज्य है, उसके माध्यम से वह जीवन को समतापूर्वक और आनंदपूर्वक जीने के योग्य हो सकता है। कैसी भी स्थितियां और परिस्थितियां हो, वह अपने मूल्यों से नहीं गिरता बल्कि अपने नैतिक मूल्यों और आदर्शों के साथ उनसे उबरना भी जान लेता है। वैष्णव धर्म इन्हीं मूल्यों और आदर्शों की बात करता है और उन्हें परिपुष्ट करता है कि मानवता का उद्धार हो सके। वैष्णव धर्म का माध्यम भक्ति है और भक्ति का मर्म शरणागति और आत्मनिवेदन है जो मानव को शांति और सुकून प्रदान करने में सहायक बनता है। वैष्णव शब्द विष्णु का वाचक है और विष्णु की भक्ति करने वाले वैष्णव कहे गए हैं। वैष्णव शब्द अहिंसा, परोपकार, प्रेम, उदारता, करुणा आदि गुणों का वाची रहा है।

मनुष्य योनि में जन्म लेने के बाद बचपन से बुढ़ापे तक का सफर केवल खाने-पीने और मौजमस्ती की जिंदगी जीने के लिए ही नहीं होता बल्कि मानव जीवन को सार्थक, सुन्दर और अर्थपूर्ण बनाने के लिए मिलता है। परमात्मा अपने अंश रूप आत्मा को मनुष्य रूप में जीवन के उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने और मानवता की उन्हीं लक्ष्यों और आदर्शों के आलोक में सेवा करने को इस सृष्टि में भेजता है। आत्मा और परमात्मा के मिलन को ही योग की परिभाषा से समझाया गया है। योग का अर्थ ही है जुड़ना। आत्मा का परमात्मा से जुड़ना।

जीवन में समस्त कार्यों का प्रतिपादन करते हुए और उसे सुन्दर बनाते हुए उस परम तत्व में विलीन हो जाने को ही योग माना गया है। यह योग कैसे होता है और कैसे करना चाहिए, इसके लिए ज्ञान योग, कर्मयोग, भक्तियोग और राजयोग के मार्ग धर्मग्रन्थों और शास्त्रों ने बताए हैं।

इनमें से भक्तियोग ऐसा मार्ग है जो कलियुग के दोषों से बचने और परमात्मा के साथ हर समय बने रहने का एकमात्र सरल और श्रेष्ठ उपाय है। भक्ति के भी नौ प्रकार हैं जिनके द्वारा साधक या भक्त नौ प्रकार से भगवान की सेवा करके उसे प्राप्त कर सकता है। भक्ति के इन नौ प्रकारों में हैं-श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। अब प्रश्न उठता है कि ये नौ प्रकार की भक्ति किसकी की जाए? परमात्मा इस सृष्टि में अलग-अलग अवतारों में प्रकट होते हैं। जिसको उस परम तत्व का जो भी अवतार या रूप मनोहर और प्रिय लगता हो, उसकी उपासना की जा सकती है।

भगवान विष्णु को इस सृष्टि के पालक रूप में स्वीकार किया गया है। यह भी माना गया है कि वे मोक्ष के दाता हैं अर्थात जो कोई भी उनकी शुद्ध हृदय से भक्ति करता है और उनकी शरण लेता है। प्रभु उसकी इस जीवन में भी रक्षा करते हैं और जीवन के बाद भी उसे मुक्ति प्रदान करते हैं। भगवान विष्णु इस सृष्टि में अलग-अलग रूपों में अवतरित हुए हैं और समय-समय पर मानवता की रक्षा करके उसका उद्धार किया है। इस प्रकार विष्णु की भक्ति के बीज वैदिक काल से ही मिलने लगते हैं। चारों वेदों में उनका उल्लेख किया गया है। भगवान विष्णु की अनेक विशेषताएं स्वीकार की गई हैं और उन्हें अनेक गुणों का देवता माना गया है।

वैष्णव धर्म सभी धर्मों के प्रति उदार रहा है और अपने मानवतावाद मूल्यों के कारण देश-विदेश में भी लोकप्रिय है। विशेषता यह है कि जिस व्यक्ति या धर्म ने दूसरों की पीड़ा को समझ लिया, वही सच्चा वैष्णव है। पर-पीड़ा को समझने वाला सभी के प्रति सहिष्णु होता है। करुणा उसके हृदय का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाव है, इसीलिए वह हिंसा को अपने जीवन में स्थान नहीं देता। सबसे बड़ी बात यह है कि वैष्णव धर्म जाति और वर्ण विषयक भेदभाव से परे है। किसी भी व्यक्ति को धर्म के आचरण से वंचित नहीं किया जा सकता। जो व्यक्ति अपने धर्म को शुद्धता के भाव से निभाता हुआ प्रभु-भक्ति करता है, वही ईश्वर का प्रिय होता है।

भक्ति साहित्य के मध्यकाल को भक्ति और कीर्तन का स्वर्णकाल कहा जाता है। इस समय में भगवान विष्णु के दो प्रसिद्ध अवतारों राम और कृष्ण के रूप में भरपूर भक्ति की गई।

भक्ति का उद्‌गम स्थल दक्षिण को माना जाता है। वहां के बारह आलवार भक्तों का जीवन इतना भक्तिपूर्ण था कि वे हर समय विष्णु की उपासना में लीन रहते थे। भगवान विष्णु की स्तुति में रचित अपने पदों का नाच-नाचकर गायन करते थे। इनमें एक महिला भक्त थी-अण्डाल जिसे उत्तर भारत की भक्त संगीतज्ञ मीरां के समान कहा गया है। भक्ति और कीर्तन की ये धारा आलवार भक्तों से चलती हुई मध्यकाल के आचार्यों और भक्तों को सम्मिलित करती गई। जिसने सारे उत्तर भारत में अपनी लोकप्रियता का डंका बजाया। इससे सिद्ध हो गया कि प्रभु-प्रेम की प्राप्ति का सबसे सुगम और लोकप्रिय मार्ग भक्तिपथ ही हो सकता है।

राम और कृष्ण के रूपों की उपासना करने वाले भक्त और आचार्यों ने वैष्णव भक्ति और कीर्तन की परिभाषा और स्वरूप को जनमानस में ग्राह्य बनाने का भरसक प्रयत्न किया। इसके फलस्वरूप कई सम्प्रदायों का जन्म हुआ जो प्राचीन परम्परा का पालन करते हुए अपने सिद्धान्तों के अनुसार प्रभु-भक्ति के मार्ग पर अग्रसर हुए। हर सम्प्रदाय में भक्ति का स्वरूप थोड़ा-बहुत अलग रहा लेकिन लक्ष्य सबका एक ही था-प्रभु प्रेम की प्राप्ति। किसी ने सगुण भक्ति को प्रभु प्रेम का आलम्बन बनाया तो किसी ने निर्गुण भक्ति को प्रभु-प्राप्ति को आलम्बन के रूप में अपनाया। आचार्य रामानुज से स्वामी रामानन्द और उनके शिष्य कबीर ने भगवान की निर्गुण भक्ति का सहारा लिया। गोस्वामी तुलसीदास ने राम के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों की उपासना की। वहीं कृष्ण भक्ति के सम्प्रदायों में भी कृष्ण की भक्ति अलग-अलग भावों और रूपों में की गई।

इन सम्प्रदायों में पांच भावों से भगवान विष्णु के प्रसिद्ध राम और कृष्ण रूप की भक्ति की गई लेकिन प्रमुख रूप से चार भावों को ही प्रधानता दी गई है। ये भाव हैं-वात्सल्य भाव, दास्य भाव, सख्य भाव और मधुर भाव। भक्ति भावना के लिए संगीत का आश्रय लिया गया। इसमें भी कीर्तन को प्रमुखता दी गई। किसी सम्प्रदाय में नाम कीर्तन तो किसी में लीला-कीर्तन को प्रथम स्थान दिया गया। कीर्तन-संकीर्तन भक्ति संगीत के अन्तर्गत आता है। संगीत का प्रभाव हर जड़ और चेतन पर पड़ता है। पशु-पक्षी भी यहां तक इसके प्रभाव में आकर

नाचने लगते हैं। फिर भगवान विष्णु ने कीर्तन की महत्ता को यह कहकर प्रमाणित कर देते हैं कि वे न तो बैकुण्ठ में निवास करते हैं, न योगियों के हृदय में रहते हैं, वे वहीं रहते हैं जहां उनके भक्तजन उनका सुंदर संगीतमयी गुणगान करते हैं। इसलिए वैष्णव सम्प्रदायों में विशेषत: हिन्दी के वैष्णव भक्त-कवियों ने कीर्तन-भक्ति का आधार ग्रहण किया।

हिंदी साहित्य में जिन वैष्णव भक्त कवियों का स्थान आदर और श्रद्धा के साथ लिया जाता है वे वही वैष्णव भक्त हैं जिनकी रचनाएं वैष्णव भाव से अनुप्राणित थीं जो संगीत के कलेवर में आकर हमेशा के लिए अमर हो गईं। हिंदी के इन वैष्णव कवियों ने अपनी रचनाओं में शबरी, निषाद, गवालिनों की भक्ति और प्रेम के अधिकारी दिखाया है जो पिछड़ी जातियों से माने जाते थे। प्रभु-भक्ति की पात्रता रविदास, कबीर आदि भक्तों के जीवन से ही सिद्ध हो जाती है। भक्ति और कीर्तन के अग्रदूत कहे जाने वाले सूरदास, कबीर, मीरा, जयदेव, आचार्य वल्लभ, चैतन्य महाप्रभु ने ही अपने जीवन आदर्शों और रचनाओं के माध्यम से तत्कालीन विषम परिस्थितियों में जकड़ी मानवता का उद्धार किया था।

वैष्णव भक्ति और कीर्तन के सैद्धांतिक आधार क्या हैं और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से उनकी यात्रा कैसी रही है, इन पक्षों को जानना भी आवश्यक हो जाता है। वेदों से शुरू हुई वैष्णव भक्ति और कीर्तन की यात्रा अलग-अलग समय में अपने अलग-अलग स्वरूप धारण करती हुई आधुनिक युग तक चली आ रही है। कीर्तन जो संगीत का ही एक रूप है, भक्ति तत्व को अधिक सशक्त बनाने में सहयोगी है। वैष्णव भक्त कवियों ने उसी का सहारा लिया। संगीत से ओतप्रोत हिंदी के भक्त कवियों की रचनाएं आज हर तरफ गूंजती सुनाई पड़ती हैं जो भजन-कीर्तन के माध्यम से जनमानस को वर्तमान के दुखों से उबारकर आनंद प्रदान कर रही हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन द्वारा हर रोज इनका प्रसारण किया जाता है बल्कि हर दिन की शुरुआत इन भक्त-कवियों की रचनाओं से होती है जो जनमानस में विश्वबंधुत्व की भावना का संदेश देती हैं।

1.2 संबद्ध साहित्य का सर्वेक्षण

1.2.1 डॉ. मुंशी राम शर्मा : भक्ति का विकास

चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-1958

इस पुस्तक में भारतीय जीवन और दर्शन में भक्ति भावना कैसे पैदा हुई। देशी और विदेशी विद्वानों के कथनों का आधार लेकर भक्ति चिंतन पर गहरा अध्ययन किया गया है। इसमें भक्ति की मर्मस्पर्शी धारा के उद्‌भव और विकास का अध्ययन है। भक्ति के दो रूप हैं साधन भी है और साध्य भी। पुस्तक में उद्‌घाटित किया गया है कि साधक साधना में जब रस लेने लगता है, तब उसके फलों की ओर से उदासीन हो जाता है। यही साधन का साध्य बन जाना है। जिस प्रकार प्रत्येक साधना का अपना अलग फल है, ठीक उसी प्रकार भक्ति भी साधक को पूर्ण स्वाधीनता, पवित्रता, एकत्व भावना तथा प्रभुप्राप्ति जैसे मधुर फल प्रदान करती है।

1.2.2 प्रभुदयाल मीतल : ब्रज के धर्म सम्प्रदायों का इतिहास

नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली-1968

ब्रजमण्डल का महत्व एक धार्मिक क्षेत्र के रूप में रहा है। यहां की संस्कृति धर्मप्रधान रही है। लेखक ने इस पुस्तक में ब्रज के धर्म-सम्प्रदायों का ऐतिहासिक वर्णन किया है जो कृष्णकाल से लेकर आधुनिक काल तक की कई सहस्राब्दियों में समय-समय पर ब्रजमंडल में प्रचलित रहकर परिस्थितिवश या तो लुप्त हो गए या अन्य नाम-रूपों में परिवर्तित होकर विविध भूमिकाओं में फलते-फूलते रहे हैं।

1.2.3 रत्नकुमारी : हिन्दी और बंगाली के वैष्णव कवि-तुलनात्मक अध्ययन भारतीय साहित्य मंदिर, फव्वारा, दिल्ली-1956

इस पुस्तक में लेखिका ने बंगाली और हिंदी के वैष्णव कवियोंकी रचनाओं, विचारधाराओं का विवरण दिया है, जिसमें से कई रोचक और महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलकर

सामने आते हैं। इसके अलावा लेखिका ने इस ओर भी ध्यान दिलाया है कि 16वीं शताब्दी का समस्त वैष्णव साहित्य भक्तिप्रधान है। 15वीं और 16वीं शताब्दी की वैष्णव भक्ति भावना देश के बड़े सांस्कृतिक आंदोलनों में से एक है जिसका देश के बाहर पड़ोसी देशों पर भी प्रभाव पड़ा।

1.2.4 डॉ. रामचरणलाल शर्मा : हिंदी साहित्य में अष्टछापी और राधावल्लभीय : काव्य, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा-1978

प्रस्तुत पुस्तक में अष्टछाप काव्य और राधावल्लभीय काव्य का विविध दृष्टिकोणों से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। वल्लभ सम्प्रदाय और राधावल्लभ सम्प्रदाय दोनों के सिद्धांत और व्यवहार पक्ष का वर्णन, दोनों की वर्तमान स्थिति और उनके प्रमुख कवियों की रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन है।

1.2.5 डॉ. नीरा शर्मा : अष्टछापी संगीत-एक विश्लेषण नवजीवन पब्लिकेशन, निवाई-2004

इस पुस्तक में अष्टछाप कवियों के काव्य का संगीत की दृष्टि से अनुशीलन करते समय संगीत के वैदिक काल तक परिवर्तनों साथ-साथ पूर्ववर्ती काव्य में संगीत की परंपरा और भक्ति सम्प्रदायों में संगीत की परंपरा का अवगाहन किया गया है। अष्टछापी भक्त कवियों के संगीत का ऐतिहासिक और तात्कालिक परिवेश में अध्ययन है।

1.2.6 दुर्गाशंकर मिश्र : भक्ति काव्य के मूल स्त्रोत नवयुग ग्रंथागार, लखनऊ- 1958

लेखक ने इस पुस्तक के माध्यम से भारतीय भक्ति साधना के कुछ मूल स्त्रोतों के बारे में प्रकाश डाला है। भक्ति काव्य का जो स्त्रोत इस भारतवर्ष में प्रवाहित हुआ है, मूलत: उसे प्रेरणाएं कहां से प्राप्त हुईं और उसका प्रारंभिक रूप कैसा था? भक्ति साधना के विकास में दक्षिण की देन, भारतीय भक्ति साधना में तमिल संतों का योग, तमिल प्रदेश के वैष्णव भक्तों पर दृष्टि डाली गई है।

1.2.7 डॉ. रामेश्वरप्रसाद सिंह : संत-काव्य में योग का स्वरूप

अनुपम प्रकाशन-1977

इस पुस्तक में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि भारतीय मनीषा का श्रेष्ठतम विकास है योग। भारतीय मनीषा के सभी क्षेत्रों और उपक्षेत्रों को योग ने प्रेरित और प्रभावित किया है। अनेक धर्म-सम्प्रदाय इससे प्रभावित हुए। कर्म, ज्ञान और भक्ति सभी के साथ योग शब्द जुड़ गया। साधना के तीनों प्रस्थान भावना प्रधान भक्ति, प्रक्रिया प्रधान कर्म और दर्शन प्रधान ज्ञान सभी योगयुक्त हो गए। संत-काव्य में प्राप्त योग का विवेचन किया गया है।

1.2.8 डॉ. के.ए.जमुना : नालायिर दिव्य प्रबंधम और सूरसागर में कृष्णकथा का स्वरूप, नाग प्रकाशन, दिल्ली- 1978

लेखक ने इस पुस्तक में उत्तर एवं दक्षिण भारत की भक्ति परंपरा, उनका पारस्परिक संबंध, सूरदास पर आलवारों का प्रभाव आदि बातों का विवेचन किया है। तमिल एवं हिंदी के भक्ति साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करके भारत की भक्ति संबंधी एकता, भक्ति की महत्ता एवं गौरव को व्यक्त किया है।

1.2.9 डॉ. राकेशबाला सक्सेना : मध्ययुगीन वैष्णव सम्प्रदायों में संगीत

राधा पब्लिकेशंस, दिल्ली-1990

इस पुस्तक में ब्रजमण्डल के पांच प्रमुख कृष्णभक्ति सम्प्रदायों के वाणी साहित्य में व्याप्त संगीत तत्व की विवेचना की है। काव्य का सबसे निकट संबंध संगीत से है। संगीत अपने श्रुतिमधुर प्रभाव से गायक और श्रोता दोनों को रसविभोर बनाकर मनोरम ध्यानलोक में पहुंचा देता है। वैष्णव भक्ति सम्प्रदायों में प्रयुक्त संगीत की स्थिति पर पूर्ण विवरण प्राप्त होता है।

1.2.10 मलिक मोहम्मद : **आलवार भक्तों का तमिल प्रबंधम और हिंदी कृष्ण काव्य विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-1964**

इस पुस्तक में प्रबंधम का सम्यक परिचय देकर मध्ययुगीन भक्ति साहित्य को प्रभावित करने वाले प्रबंधम के मुख्य तत्वों का विवेचन मिलता है। प्रबंधम और 16वीं शती के कृष्ण काव्य का तुलनात्मक अध्ययन लेखक ने किया है।

1.3 विषय परिसीमन

प्रत्येक शोध प्रबंध की एक अपनी सीमा होती है। व्यापक दृष्टि से किए गए अध्ययन के आधार पर ही शोध प्रबंध का परिसीमन किया जाना चाहिए। किसी भी शोधकार्य का एक निश्चित रूपरेखा के आधार पर परिसीमन करना अनिवार्य होता है। यूं तो भक्ति साहित्य पर कई प्रकार के शोध प्रबंध लिखे जा चुके हैं लेकिन वैष्णव भक्ति और कीर्तन के विविध आयामों को लेकर शोध कार्य की कमी है। वहीं हिंदी वैष्णव भक्ति और कीर्तन: सैद्धांतिक आधार और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य विषय का गहरा अध्ययन अछूता रहा है। वर्तमान में इस विषय पर शोध की अधिक आवश्यकता है और नवीन तथ्यों का उजागर करना अनिवार्य है। जिस तरह का वैश्विक दृश्य बना हुआ है, जिसमें सामाजिक और मानसिक विसंगतियों की भरमार दिखाई देती है, ऐसे में हिंदी भक्त-कवियों की वैष्णव तत्व से गुंथी भक्ति भावना और कीर्तन ऐसे आयाम हैं जो मानवता को विसंगतियों से उबार सकते हैं। यही नहीं राष्ट्रीय एकता और वसुधैव कुटुंबकम के नारे को और बुलंद कर सकते हैं और एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण किया जा सकता है। शोध प्रबंध के विषय को ध्यान में रखते हुए सैद्धांतिक आधारों और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यों के मुख्य बिंदुओं को ही केंद्र में रखा गया है।

1.4 विषय का महत्व

प्रत्येक शोधकार्य के लिए किसी विशेष उद्देश्य का होना अनिवार्य होता है। विषय विशेष को लेकर ही शोध कार्य का महत्व आंका जाता है। वर्तमान संदर्भों में शोध कार्य विविध

क्षेत्रों में हो रहा है और विविध आयामों को लेकर ज्ञान का विस्तार भी हुआ है। हिंदी भक्ति साहित्य पर भी विभिन्न विधाओं में शोधकार्य हुए हैं लेकिन वैष्णव भक्ति पर स्वतंत्र रूप से उतना शोध कार्य नहीं हुआ। भारतवर्ष की धर्म-साधनाओं में वैष्णव धर्म प्रमुख रहा है। वैष्णव तत्वों का भक्ति साधना के साथ निर्वाह करते हुए विकट और विषम परिस्थितियों जूझती मानवता की रक्षा की जा सकती है। वहीं कीर्तन की परंपरा भी अलग-अलग रूपों में भारतीय धर्म साधना में होती आई है जिसका बहुत ही परोक्ष रूप में अध्ययन मिलता है। वर्तमान समय में जब आधुनिकता और विकास की तेज दौड़ ने जनमानस को अपने नकारात्मक प्रभावों से इतना जकड़ लिया है कि वह तनाव, विषाद, दबाव, चिंता, द्वेष आदि का शिकार बन चुका है। ऐसे में हिंदी वैष्णव भक्ति और कीर्तन का गहनता से किया अध्ययन अधिक सकारात्मक, सार्थक और उपयोगी सिद्ध होगा।

1.5 विषय की मौलिकता

विषय की मौलिकता किसी भी शोध कार्य की पहली अनिवार्यता होती है। विषय की मौलिकता को बरकरार रखते हुए विविध आयामों और परिप्रेक्ष्यों को प्रकाश में लाया जाता है। शोधार्थी को चाहिए कि वह इन्हें सत्यता और तर्क की कसौटी पर रखकर परिपुष्ट करे। हिंदी वैष्णव भक्ति और कीर्तन: सैद्धांतिक आधार और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य विषय भी पूरी तरह से मौलिक रूप में है और मौलिकता को ध्यान में रखते हुए ही इसका गहरा अध्ययन, विवेचन और विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।